National Journal of Advanced Research
www.multidisciplinaryarticle.in
ISSN: 2455-216X
Received: 27-01-2024, Accepted: 20-02-2024, Published: 14-03-2024
Volume 10, Issue 1, 2024, Page No. 7-8

अद्वैत वेदान्त में अध्यास का स्वरूप

विवेक कुमार पाण्डेय
दर्शनशास्त्र विभाग, डा. हरीसिंह गौर विश्व विद्यालय सागर, मध्यप्रदेश, भारत

सारांश
भारतीय दर्शन में अग्रणीय अद्वैत वेदान्त, अपने मूल स्थापना में ''ब्रह्म'' की सत्ता को पारमार्थीक सत् के रूप में स्थापित करता है। ब्रह्म सत् के स्थापना के प्रतीरूप को एकमात्र सत् मानने के अनेतर अद्वैत वेदान्त में व्यावहारिक सत् और प्रातीभासीक सत् को भी सत्ता के स्तरीकरण के रूप में स्वीकार किया गया है। हालांकि अद्वैत वेदान्त में व्यावहारिक सत्ता और प्रातीभासिक सत्ता को ''अध्यास–संसकी'' या अध्यास जनीत बताया गया है, जो कि पारमार्थीक सत्ता की तरह सत् नहीं है, बल्कि इनकी सत्ता बाध्य है जो कि अध्यासोमुखी है। अद्वैत वेदान्त में जगत् की सत्ता और भ्रम के सत्ता को अध्यासोमुखी कहने तथा अध्यास का क्या स्वरूप है तथा यह किस प्रकार से जगत की सत्ता को प्रभावित करती है यह एक गहन चिन्तन के माध्यम से ही समझा जा सकता है।

मूलशब्दः अद्वैत वेदान्त, सत्ता, उपसर्ग पूर्वक, अध्यस्त ज्ञान

मुख्य पत्र

अध्यास शब्द की व्युत्पत्ति ''अधि'' उपसर्ग पूर्वक ''अस'' धातु में ''अत्'' प्रत्यय लगाने पर अध्यास शब्द बनता है, जिसका शाब्दिक अर्थ–गलत सोचना, विपरीत दिशा की तरफ चलना है। एक अन्य अर्थ के रूप मे–

''अधिशृत्य आस्ते'' अर्थात् जिस वस्तु की प्रतीत हो रही है, वह वहां पर नहीं है किन्तु वह एक अन्य वस्तु का अवलम्बन करके प्रतीति हो रही है। ब्रह्मसूत्र शांकर भाष्य में उपाद्धात् को मध्या भाष्य की संज्ञा से सम्बोधित किया गया है। ब्रह्मसूत्र शांकर भाष्य में शंकराचार्य ने भ्रम, मिथ्या, अज्ञान आदि को अध्यास का ही पर्याय माना है। अद्वैत वेदान्त में अध्यास या अज्ञान को कई रूपों में माना गया है, यदि ज्ञेय वस्तु भासित ना हो न हो तो वह अज्ञान वस्तु का अज्ञान है, इसके विपरीत वस्तु भाषित होते हुए भी यह ज्ञान हो कि यह वही वस्तु है जिसे हम खोज रहे हैं तो भी अज्ञान ही होगा। इन दोनों स्थितियों के मध्य भी ज्ञेय वस्तु भी ज्ञेय वस्तु हो सकती है, वह वस्तु दूसरी न प्रकट हो और न अप्रकट, तो भी उसका अज्ञान होगा, एक और अन्य दशा में एक वस्तु दूसरी वस्तु से मिल जाय और स्वतन्त्र रूप से अलग–अलग उपलब्धि उनकी ना हो तो भी उसका अज्ञान हो सकता है।

इस प्रकार से अद्वैत वेदान्त में अज्ञान को अध्यास रूप स्वीकार किया गया है। अध्यास की स्थिति में दो वस्तुओं के मध्य एक–दूसरे से इस प्रकार सम्बन्ध हो जाता है कि एक वस्तु के धर्म दूसरी वस्तु में और दूसरी वस्तु का धर्म प्रथम वस्तु में भासित होने लगती है। उदाहरण ''सज्जु सर्प'' में रज्जु में सर्प और सर्प में रज्जु के धर्मों का एक दूसरे पर अध्यास हो जाता है। यही स्थिति विषयी और विषय के मध्य हो जाता है, दोनों एक दूसरे के विपरीत है दोनों का विरोध प्रकाश और अन्धकार के समान जड़ है। विषयी प्रकाश के समान चेतना स्वरूप है और विषय अंधकार के समान जड़ है, फिर भी इन दोनों के धर्मों का परस्पर अध्यास हो गया है। आत्मा शुद्ध, चेतन स्वरूप, अखण्ड, निर्विकार, शाश्वत, कूटस्थ आदि लक्षणों से युक्त है और अनात्म स्वरूप समस्त जगत हैं जिसमें शरीर, मन, बुद्धि आदि भी आता है।[1] अनात्म जड़, समुदाय और प्रकाश्य है। यह सीमित विकारवाद और नश्वर है ऐसी अवस्था में दोनों का परस्पर तादात्म नहीं हो सकता है केवल धर्मों का ही परस्पर अध्यास होता है। इसी लिये हम अनुभव करते है कि शरीर चेतन है, आत्मा शरीर के आकार वाली है, यही प्रतीति देहात्मबुद्धि है और उसका कारण अध्यास है। जिस वस्तु का जो धर्म है वह वही दिखाई दे तो न अध्यास होगा और ना ही अज्ञान का प्रश्न उठेगा, किन्तु जब सत्य का धर्म असत् में और असत् का धर्म सत् में दिखाई देने लगे तथा उसे वही रूप में स्वीकार कर लिया जाता है तो उसे अध्यास कहते है। और अध्यस्त धर्मों को सत्य मान लेना अज्ञान कहलाता है। शंकराचार्य के अनुसार अध्यास का कारण ''अविवेक'' है और इसे मिथ्याज्ञाननिमित्त माना जाता है।[2]

अध्यास शब्द का मुख्य अर्थ विक्षेप होता है। विक्षिप्त ज्ञान को ''अध्यस्त ज्ञान'' कहा जाता है। चेतना अथवा ज्ञान का विषेपरूप अध्यास एक प्रकार का मिथ्या प्रत्यय का नाम है। पंचदशी में विद्यारण्य स्वामी ने कहा है कि कुटसी प्रत्ययात्मा पर अविद्या का आवरण पड़ जाता है जिसके कारण स्थूल–शरीर और सूक्ष्म शरीर इस प्रकार आरोपित तथा अध्यस्त होते है जैसे शुक्ति और रजत।[3] अध्यस्त चित्त की यह स्थिति विक्षेपाध्यास कहलाती हैं अविद्या की दो शक्तियां है– आवरण और विक्षेप इनमें से विक्षेप–शक्ति ही अध्यास है इसी को आध्यारोप भी कहते है। यह अध्यास इतरेतराध्यास या अन्योन्याध्यास कहलाती है जब दो प्रमेयों में एक दूसरे का आध्यारोप होता है, जैसे शुक्ति और रजत दोनों विद्यमान हो और प्रमाता शुक्ति को रजत तथा रजत को शुक्ति समक्ष ले इसे इतरेतराध्यास कहा जायेगा।

अध्यास का लक्षण बताते हुए शंकराचार्य कहते है कि ''स्मृतिरूपः परत्त पूर्व दृष्टावभासः''[4] अर्थात अन्य स्थान पर पहले देखी हुऐ वस्तु का स्मृति जैसा अवभास होना ही अध्यास है। इसमें ''परत्त अवभास' ही मात्र अध्यास का लक्षण है। 'स्मृतिरूप' और 'पूर्वदृष्टवभास' ये दोनों अध्यास के साधक हैं परत्त अवभास का अर्थ है अधिष्ठान में किसी अन्य वस्तु की प्रतीति होना। अन्य भासित होने वाली वस्तु स्मृति के आधार पर प्राप्त होती है। स्मृति उसी वस्तु की होती जिसे हम पहले कभी देखा था। मामती में स्पष्ट किया गया है कि शुक्ति सत्तावान है परन्तु पूर्वदृष्ट रजत का उसमें स्मृतिरूप से अवभास हो जाता है।

यहां अब ये प्रश्न उठता है कि प्रत्यक्ष विषय में ही अन्य विषय का अध्यास हाता है तो तब प्रत्यमात्मा जैसे अपरोक्ष पदार्थ में अध्यास कैसे हो सकता है? इसके उत्तर में अद्वैत वेदान्तीयों का कहना है कि अहं प्रतीति से आत्मा की अपरोक्षानुभूति होती ही है। अतः उसे अध्यास हो सकता है, जैसे आकाश अप्रत्यक्ष है फिर भी लोग उसमें मलिनता आदि का आरोप करते है। शंकराचार्य के अनुसार अविद्या इतरेतराध्यास तब होता जब आत्मा और अनात्मा में आत्मा का प्रतिभास होता है इसी इतरेतराध्यास को लेकर लौकिक और वैदिक व्यवहार तथा सभी चलते है प्रभाता और

प्रमेय वाले व्यवहार और शास्त्र अध्यास के अधीन हैं। देह, इन्द्रिया आदि में जब तक अहंता और ममता नहीं होती तब तक अध्यासरहित आत्मा प्रमाता नहीं हो सकता, क्योंकि इन्द्रियों के बिना प्रत्यक्ष आदि व्यवहार नहीं हो सकते और न ही अधिष्ठान आत्मा के बिना इन्द्रियों का कोई व्यवहार हो सकता है। आत्मा के रूप में देह को अध्यस्त किए बिना कोई पुरूष व्यापारशील नहीं हो सकता। शंकराचार्य अध्यास को पुनः परिभाषित इस प्रकार करते है ''अध्यासो नाम अतस्मिस्तदबुद्धि'' अर्थात अतद में तद्बुद्धि ही अध्यास है। पद्मपदाचार्य ने भी कुछ इसी तरह की परिभाषा दिया है ''अध्यासों नाम–अतद्रुपे तद्रुपावभासः अर्थात जो तद्रुप नहीं है उसमें तद्रुपता का अवभास अध्यास हैं। यह नैसर्गिक अध्यास अनादि, अनन्त मिथ्या प्रत्यय रूप है जो कर्तृव्य और भोतृत्व में आत्मा को प्रवृत्त करता है। इसी अध्यास के सम्पर्क से ही पुरूष का संसरण (जन्ममरण चक्र) होता है और यह अध्यास का बन्धन रजोगुण और तमोगुण अविवेकि द्वारा कल्पित है यही जन्म आदि दुःख का कारण है। पंचदशी में विद्यारण्यस्वामी का कहना है कि यह अनादि भ्रम मनुष्य को इस प्रकार घेरता है कि साक्षी तत्व के सत्यत्व का अध्यास चिदाम्ययुक्त शरीरों पर हो जाता है जिससे जीव अध्यस्त शरीर को अपना यथार्थ स्वरूप मान लेता है। अहं शब्द का अर्थ स्पष्ट करते उन्होंने कहा है कि सर्वात्मा और चिदाभास में इस प्रकार इतरेतराध्यास होता है कि दोनों एकीभूत हो जाते है जिससे अहं शब्द का प्रयोग होता है। तात्पर्य यह है कि अहंता में शरीस्य चिदिबम्ब और व्यापक आत्मा का एकभूत अध्यस्त व्यवहार होता है। भ्रमवस असंका आत्मा का अन्येन्याध्यास होता है और जीव का स्वरूप बनता है। अध्यास को विवेक के द्वारा हटाया जा सकता है, किन्तु द्वैत की वासना बार–बार अध्यास में डालती है और बार–बार विवेक से हटाया जाता है। द्वैत की दृढ़ वासना (अध्यास) की निवृत्ति के लिए बार–बार विवेक का अभ्यास किया जाता है।''

इस प्रकार अद्वैत वेदान्त में भ्रम अथवा मिथ्या ज्ञान को ही अध्यास नाम दिया गया है जिसका स्वरूप भिन्न–भिन्न दर्शगे में विपर्यय अथवा मिथ्या भ्रम या ख्याति के रूप में विवेचित किया गया है।

निष्कर्ष

अद्वैत वेदान्त में जगत के नानात्व और अद्वैत की समस्या को माया या अध्यास के द्वारा सुलझाया गया है। अद्वैत से नानात्व की उत्पत्ति किस प्रकार होती है इसी की व्याख्या करने के लिए शंकराचार्य ने माया की अवधारणा को स्वीकार किया। शंकराचार्य के अनुसार माया अनिर्वचनीय तथा मिथ्या है। अतः मायाकल्पित समस्त विश्व भी मिथ्या है।'' इन नानात्वपूर्ण विश्व के माया द्वारा ब्रह्म पर मध्यरोपित होने से अद्वैत समाप्त नहीं होता, उन्होंने स्पष्ट कहा है कि आत्मा इन्द्रियानुभव से परे आज का अजन्मा, अकर्ता, अभोक्ता एवं सभी विकारों से परे है। किन्तु शरीर इन्द्रियानुभविक स्थूल, नाशवान एवं सभी विकारों से पूर्ण है। आत्मा के शुद्ध स्वरूप को अक्षुण रखते हुए शरीर से उसकी एकता का अनुभव की व्याख्या अध्यास के अभाव में सम्भव नहीं है। शंकराचार्य एवं उनके अनुयायियों ने सम्भवतः इसी तथ्य को समझकर अध्यास को अपने दर्शन में स्थान दिया। इसीलिए अद्वैत वेदान्त में अध्यास को मिथ्यारूप, कर्तृत्व और भोक्तत्व का प्रवर्तक माना गया है। इस प्रकार शंकर वेदान्त में विश्व एवं व्यक्ति से सम्बन्धित अनेक जटिल समस्याओं का निराकरण अध्यास द्वारा किया गया है।

सन्दर्भ सूची

1. आत्मबोध शंकराचार्य, 62
2. ब्रह्मसूत्र, शांकरभाष्य, अध्यासभाष्य, पृ० 2
3. वही, पृष्ठ 3
4. पंचदशी, 6/33
5. ब्राह्ममसूत्र, शांकरभाष्य, अध्यासभाष्य पृ० 4
6. पंचदशीपादिका पृ० 23
7. विवेकचूड़ामणि, 181
8. पंचदशी, 7/31
9. वही, 7/10
10. वही, 7/294
11. ब्रह्मसूत्र, शांकरभाष्य, 1.2.13